प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र

एम.कॉम (पूर्वार्द्ध)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक–124 001

Copyright © 2003, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK - 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय–सूची

अध्याय 1	**प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की प्रकृति एवं क्षेत्र** (Nature and Scope of Managerial Economics)	5
अध्याय 2	**माँग सिद्धान्त** (Demand Theory)	26
अध्याय 3	**उत्पादन के सिद्धान्त** (Theory of Production)	105
अध्याय 4	**पूर्ण प्रतियोगिता में कीमत निर्धारण** (Price Determination Under Perfect Competition)	143
अध्याय 5	**व्यापार चक्र** (Business Cycle)	218

MANAGERIAL ECONOMICS

Max. Marks: 100
Time: 3 Hours

Paper IV MC-1.4

Note: *There will be three sections of the question paper. In section A there will be 10 short answer questions of 2 marks each. All questions of this section are compulsory. Section B will comprise of 10 questions of 5 marks each out of which candidate are required to attempt any seven questions. Sections C will having 5 questions of 15 marks each out which candidates are required to attempt any three questions. The examiner will set the questions in all the sections by covering the entire syllabus of the concerned subject.*

COURSE INPUTS

Unit 1: Nature and Scope of Managerial Economics: Objectives of a firm; Economic theory and managerial theory; Managerial economists role and responsibilities; Fundamental economic concepts-incremental principle, opportunity cost principle, discounting principle, equi-marginal principle.

Unit 2: Demand Analysis: Individual and market demand functions, Law of demand , determinants of demand, Elasticity of demand: its meaning and importance, elasticity, income elasticity and cross elasticity; Using elasticity in managerial decision. Theory of consumer choice , cardinal utility approach, indifference approach, revealed preference and theory of consumer choice under risk; Demand estimation for major consumer durable and non-durable products; Demand forecasting techniques.

Unit 3: Production Theory: Production function, production with one and two variable inputs, Stages of production, Economic value analysis short and long run cost functions their nature, shape and interrelationship, Law of variable proportions; Law of returns of scale.

Unit 4: Price Determination Under Different Market Conditions: Characteristics of different market structures, Price determination and firms equilibrium in short run and long run under perfect competition, monopolistic competition, oligopoly and monopoly.

Pricing Practices: Methods of price determination in practice, pricing of multiple products, price discrimination; International price discrimination and dumping, transfers pricing

Unit 5: Business Cycle: Nature and phases of a business cycle, Theories of business cycles, psychological profit, monetary innovation, Cobweb, Samuelson and Hicks theories

Inflation: Definition, characteristics and types; Inflation in terms of demand-pull and cost push factors, effects of inflation.

अध्याय – 1
प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की प्रकृति एवं क्षेत्र
(Nature and Scope of Managerial Economics)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की प्रकृति एवं क्षेत्र
(Nature and Scope of Managerial Economics)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र एक नवीन विषय है जिसमें आर्थिक विश्लेषण के सिद्धान्तों का प्रयोग प्रबन्धकीय निर्णयों तथा भावों नियोजन में किया जाता है। अतः यह एक व्यावहारिक उपयोगिता का विषय है। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की उपयोगिता, तथा प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की भूमिका तथा दायित्व का वर्णन करने से पहले इसका अर्थ, तथा परिभाषा का जानना अत्यन्त अनिवार्य है।

1. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का अर्थ
(Meaning of Managerial Economics)

साधारण शब्दों में प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का अभिप्रायः अर्थशास्त्र (Economics) का प्रबन्धकीय निर्णयों में उपयोग से है। (The use of economics by the business manager for managerial uses is called managerial economics)

2. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की परिभाषा
(Definition of Managerial Economics)

विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र को अलग-अलग ढंग से परिभाषित किया है इनके द्वारा दी गई महत्वपूर्ण परिभाषाऐं इस प्रकार है।

1. डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ हेन्स ने प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र को परिभाषित करते हुए लिखा है, "प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र निर्णय लेने में प्रयोग होने वाला अर्थशास्त्र है। यह अर्थशास्त्र की एक विशिष्ट शाखा है जो निरपेक्ष सिद्धान्त तथा प्रबन्धकीय व्यवहार के बीच की घाटी के सेतु–बन्धन का कार्य करता है। यह समस्याओं के स्पष्टीकरण, सूचनाओं के संगठन एवं मूल्यांकन तथा वैकल्पिक व्यवहारों की तुलना में आर्थिक विश्लेषण के उपकरणों के प्रयोग को अधिक महत्व देता है।

   (Managerial Economics is economics applied in decision-making. It is specail branch of economics bridging the gap between abstract theory and managerial practice. Its stress is on the use of the tools of economic analysis in clarifying problems, in organising and evaluating information, and in comparing alternative courses of action.

2. जोल डीन (Joel Dean) के अनुसार, "प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का उद्देश्य यह बताना है कि आर्थिक विश्लेषण का उपयोग व्यावसायिक नीतियों के निर्धारण में कैसे हो सकता है।"

   ("The purpose of Managerial Economics is to show how economics analysis can be used in formulating business policies."

3. मैकनेअर तथा मेरियम (Mc. Nair & Meriam) के अनुसार, "व्यावसायिक परिस्थितियों के विश्लेषण हेतु आर्थिक

रीतियों का उपयोग ही प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र में निहित है।"

("Business Economics consists of the use of economic modes of thought to analyse business situations.)

4. नारमन एफ. दफ्ती के अनुसार "प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र में अर्थशास्त्र के उस भाग का समावेश होता है जिसे फर्म का सिद्धान्त कहते हैं। तथा जो व्यवसायी को निर्णय लेने में पर्याप्त सहायक हो सकता है।"

("It includes that portion of economics known as the theory of the firm, a body of theory which can be of considerable assistance to the business man in his decision-making")

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन करने के बाद यह कहा जा सकता है कि प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र आर्थिक ज्ञान की वह शाखा है जिसमें आर्थिक विश्लेषण के सिद्धान्तों का व्यावसायिक प्रबन्ध की नीति निर्धारण में प्रयोग करने हेतु अध्ययन किया जाता है। यह विज्ञान अर्थशास्त्र तथा प्रबन्ध की सीमा पर स्थित है और अर्थशास्त्र तथा प्रबन्ध के मध्य सेतु–बन्धन का कार्य करता है।

3. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का क्षेत्र
(Scope of Managerial Economics)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र के क्षेत्र से अभिप्राय इसके अर्न्तगत अध्ययन किए जाने वाले विषयों से है इसमें प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का स्वरथ तथ उसकी सीमाऐं निर्धारित होती हैं प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र के क्षेत्र का अध्ययन निम्नलिखित तीन भागों में किया जा सकता है।

A) प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की विषय सामग्री
(Subject matter of Managerial Economics)

B) प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की प्रकृति
(Nature of Managerial Economics)

C) प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की सीमाऐं
(Limitations of Managerial Economics)

(A) प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की विषय सामग्री
(Subject Matter of Managerial Economics)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की विषय सामग्री बहुत विस्त त है क्योंकि इसमें वे सभी आथिक सिद्धान्त, अवधारणाऐं, मॉडल्स तथा विधियाँ सम्मिलित होती हैं। जो व्यावसायिक फर्मो के प्रबन्धकों को निर्णयन तथा भावी नियोजन में सहायक होती हैं। कुछ अर्थशास्त्री ऑपरेशन्स रिसर्च (Operation Research) की विभिन्न विधियों को भी इसकी विषय वस्तु में शामिल कर लेते हैं। सामान्यतया आर्थिक विश्लेषण की निम्न विषय सामग्री इसके कार्य क्षेत्र में आती हैं:

1. **उत्पादन नियोजन एवं प्रबन्ध (Production Planning and Management)**– प्रत्येक फर्म किसी विशेष उत्पादन कार्य में लगी होती है, अतः उसे उत्पादन नियोजन एवं प्रबन्ध करना होता है। फर्म को अपने साधनों तथा उनसे उत्पादित की जाने वाली वस्तुओं को ध्यान में रखकर लाभदायक निर्णय करने होते हैं। अपने कौन से साधनों को, कितनी मात्रा में, कौन सी वस्तु के उत्पादन में लगायें जिससे फर्म न्यूनतम लागत पर अधिकतम उत्पादन प्राप्त कर सके। प्रबन्धकों को उत्पादन कार्य जो कि आदान-प्रदान के पारस्परिक भौतिक सम्बन्ध की व्याख्या करता है, का समुचित ज्ञान होना चाहिए। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र में उत्पादन प्रकार्य (Production Function) का विस्तार से अध्ययन किया जाता है।

2. **लागत विश्लेषण (Cost Analysis)**– लागत विश्लेषण प्रबन्धकों का एक महत्वपूर्ण कार्य होता है इसके अन्तर्गत फर्म के लाभ को अधिकतम करने के लिए लागतों की व्याख्या करना तथा नियन्त्रण करना होता है। लागतें अनेक प्रकार की होती हैं जैसे सीमान्त लागत, स्थिर लागत आदि। (Marginal cost, Variable cost, Fixed cost,

respectively etc) इन विभिन्न लागतों को कम करके ही अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

3. **माँग विश्लेषण एवं पूर्वानुमान (Demand Analysis and Forecasting)**– माँग विश्लेषण एवं पूर्वानुमान प्रबन्धकीय निर्णय तथा भावी नियोजन में सहायक होते हैं। मांग विश्लेषण एवं पूर्वानुमान के अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया जाता है कि फर्म की वस्तु विशेष की बाजार में वर्तमान में औसतन कितनी मांग है,यह माँग किन–किन तत्वों से प्रभावित होती है,बाजार में वस्तु के कौन–कौन से स्थानापन्न उपलब्ध हैं तथा वस्तु विशेष की भावी मांग कितनी होगी। फर्म के मांग विश्लेषण एवं पूर्वानुमान सम्बन्धी निर्णय सही होने पर फर्म अधिक लाभ कमाती है तथा निर्णय गलत होने पर हानि उठाती है।

4. **मूल्यनिर्धारण सम्बन्धी नीतियाँ एवं व्यवहार (Pricing Policies and Practices)**– मूल्य फर्म के लिए आगम होता है। अतः मूल्य का निर्धारण प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण विषय है। फर्म की सफलता मूल्य निर्धारण सम्बन्धी निर्णयों पर निर्भर करती है। इसके अन्तर्गत बाजारों के विभिन्न प्रारूपों में मूल्य नीतियों तथा व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है।

5. **विक्रय प्रोत्साहन एवं व्यूह-रचना (Sales Promotion and Strategy)**– एक व्यावसायिक प्रबन्धक (Business manager) को विक्रय–व्यूह रचना के प्रति भी पर्याप्त ध्यान देना होता है। विक्रय लागतें विक्रय व्यूह रचनापर निर्भर करती है। विक्रय व्यूह रचना पर ही विक्रय की मात्रा निर्भर करती है। विक्रय प्रोत्साहन पर कितना व्यय किया जाए, विज्ञापन की मात्रा, आकार एवं प्रकार क्या हो, यह सब प्रबन्धक को देखना होता है। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र में विक्रय लागतों, विक्रय प्रोत्साहन योजनाओं एवं विक्रय व्यूह रचना व व्यवस्था का अध्ययन करना होता है।

6. **लाभ प्रबन्ध (Profit Management)**– व्यावसायिक फर्मो की स्थापना लाभ कमाने के उद्देश्य से की जाती है। दीर्घकाल में फर्म की सफलता का मापन लाभ के आधार पर ही होता है। लाभ आगम तथा लागतों पर निर्भर करता है। लागत तथा आगम अनेक कारकों से प्रभावित होते हैं। जिनमें से कुछ कारक तो फर्म के लिए आन्तरिक होते हैं तथा कुछ बाह्य फर्म अनिश्चितता के वातावरण में विभिन्न अनुमानों एवं आशाओं पर कार्य करती है। इसलिए लाभ का नियोजन एवं प्रबन्ध प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण एवं जटिल कार्य है। इसके अन्तर्गत लाभ सम्बन्धी धारणाओं,लाभा नियोजन, लाभ नियोजन विधियों जैसे सम–विच्छेद विश्लेषण (Break-even analysis),लाभ–मापन तथा लागत नियन्त्रण का अध्ययन किया जाता है।

7. **पूंजी प्रबन्ध (Capital Management)**– व्यावसायिक फर्मो को समयसमय पर पूँजी का विनियोजन करना होता है। पूँजी विनियोजन सम्बन्धी निर्णयों में एक ओर भारी भरकम राशि लगी होती है तथा दूसरी ओर इनमें एक बार विनियोजन कर देने के बाद निर्णयों को वापस परिवर्तित करना बहुत कठिन होता है। ये निर्णय सर्वोच्च स्तर पर ही किये जाते हैं। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र में पूँजी प्रबन्ध बहुत महत्वपूर्ण है। इसमें पूँजी की लागत, पूँजी पर लाभ–देयता तथा विभिन्न परियोजनाओं में से उपर्युक्त परियोजना या परियोजनाओं का चुनाव सम्मिलित होता है।

(B) प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की प्रकृति
(Nature of Managerial Economics)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की प्रकृति के सम्बन्ध में हमें निम्न बातों का अध्ययन करना होता है।

क) क्या प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र एक विज्ञान है ?
ख) क्या प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र एक कला है ?
ग) क्या प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र वास्तविक विज्ञान है या आदर्शात्मक विज्ञान ?

(C) प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की सीमाऐं
(Limitations of Managerial Economics)

इसकी मुख्य सीमाऐं निम्नलिखित हैं।

1) आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन।

2) आर्थिक नियम कम निश्चित होते हैं।

4. फर्म का उद्देश्य

(Objectives of Firm)

फर्में (Firms)– अर्थशास्त्र में 'फर्म' शब्द को उत्पादक के पर्यायी के रूप में प्रयोग किया जाता है। वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन का निर्णय एक फर्म द्वारा लिया जाता है। इसके लिए, वह उत्पादन के साधनों को नियुक्त करती है और उनके स्वामियों को भुगतान देती है। जिस प्रकार अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए परिवार वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग करते हैं उसी प्रकार फर्में लाभ कमाने के लिए वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करती हैं। 'फर्म' शब्द में निजी और सार्वजनिक संयुक्त स्टॉक कंपनियां, साझेदारी फर्में, सहकारी सोसायटियां, छोटी और बड़ी दुकानें, जो बिना वस्तुएं बनाए उनको बेचती हैं, शामिल हैं।

1) लाभ अधिकतमकरण
2) विक्रय अधिकतमकरण
3) उत्पादन अधिकतमकरण
4) संतुष्टि अधिकतमकरण
5) उपयोगिता अधिकतमकरण

5. आर्थिक सिद्धान्त तथा प्रबन्धकीय सिद्धान्त

(Economic Theory & Managerial Theory)

फर्म का मुख्य उद्देश्य लाभ अधिकतमकरण रहा है। परन्तु अधिकतर आनुभविक प्रमाण फर्मो के अन्य उद्देश्यों की ओर संकेत करते हैं जैसे विक्रय अधिकतमकरण,उत्पादन अधिकतमकरण, उपयोगिता अधिकतमकरण, आदि।

साइमन का संतुष्टिकरण सिद्धान्त, सायर्ट तथा मार्च का व्यवहार–संबंधी सिद्धान्त, विलियमसन का प्रबंधकीय विवेक सिद्धांत, मैरिस का व द्धि अधिकतमकरण सिद्धान्त, और बोमल का विक्रय अधिकतमकरण सिद्धान्त। फर्म के विभिन्न उद्देश्यों को प्रकट करते हैं। ये अनिश्चितता की अवस्थाओं के अन्तर्गत फर्मो में निर्णयकरण प्रक्रिया पर विचार करती हैं, जबकि इसके विपरीत फर्म के नव–क्लासिकी सिद्धांत में लागत और मांग के पूर्ण ज्ञान की स्थितियों पर विचार किया जाता है। फर्म के व्यवहार–संबंधी और प्रबंधकीय सिद्धान्तों में विलियमसन का प्रबंधकीय विवेक सिद्धान्त (Williamson's Managerial Discretion Theory) प्रबन्धकीय सिद्धान्तों में प्रमुख सिद्धान्त माना जाता है। इस अध्याय में कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का उल्लेख किया जा रहा है जो इस प्रकार है :

1) लाभ अधिकतमकरण सिद्धान्त
(Profit Maximisation Theory)
2) विलियमसन का प्रबन्धकीय विवेक सिद्धान्त
(Williamson's Managerial Discretion Theory)
3) बोमल का विक्रय अधिकतमकरण मॉडल
(Baumol's Sales Maximisation Model)

लाभ अधिकतमकरण सिद्धान्त
(Profit Maximisation Theory)

फर्म के नव–क्लासिकी सिद्धांत में एक व्यावसायिक फर्म का मुख्य उद्देश्य लाभ अधिकतमकरण है। फर्म अपने लाभों को अधिकतम करती है जब वह दो नियमों को संतुष्ट करती है: (1) MC = MR और (2) MR वक्र नीचे से काटता है। अधिकतम लाभों का अभिप्राय शुद्ध लाभों से है जो उत्पादन की औसत लागत से ऊपर आधिक्य होते हैं। यह वह राशि है जो उद्यमी

के पास उत्पादन के सभी साधनों को भुगतान करने के बाद बचती है, जिसमें प्रबंधन की मजदूरी भी शामिल है। दूसरे शब्दों में, यह उसके सामान्य लाभों से ऊपर अवशिष्ट (residual) आय है। फर्म की लाभ अधितमकरण की शर्त को इस प्रकार भी व्यक्त किया जा सकता है।

$$\text{Maximum } \pi (Q)$$

$$\text{जहाँ } \pi (Q) = R (Q) - C (Q)$$

जहाँ π (Q) लाभ है, R (Q) आगम, C (Q) लागतें और Q उत्पादन की बेची गई इकाइयां।

ऊपर वर्णित दोनों सीमांत नियम और लाभ अधिकतमकरण शर्त पूर्ण प्रतियोगिता फर्म और एकाधिकार फर्म दोनों पर लागू होते हैं।

पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत लाभ अधिकतमकरण

(Profit Maximisation under Competition)

पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत फर्म अनेक उत्पादकों में से एक होती है। वह वस्तु की मार्किट कीमत को प्रभावित नहीं कर सकती है। वह कीमत - लेने वाली (price taker) और मात्रा-समायोजक (quantity adjuster) होती है। वह केवल बेचे जाने वाली वस्तु के बारे में निर्णय ले सकती है, जिसे वह मार्किट कीमत पर बेच सकती है। इसलिए पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत फर्म का MR वक्र बराबर होता है AR वक्र। MR वक्र X—अक्ष के समानांतर होता है क्योंकि कीमत मार्किट द्वारा निश्चित की जाती है और फर्म उस कीमत पर अपनी वस्तु की मात्रा बेचती है। इस प्रकार फर्म संतुलन में होती है जब MC = MR = AR (कीमत)। लाभ अधिकतमकरण वाली फर्म का संतुलन चित्र 1.1 में दर्शाया गया है जहां MR वक्र को MC वक्र पहले बिन्दु A पर काटता है। यह MC = MR की शर्त को पूरा करता है परन्तु यह अधिकतम लाभ का बिन्दु नहीं है क्योंकि A के बाद MC वक्र नीचे रहता है MR वक्र के। फर्म के लिए न्यूनतम उत्पादन OM लाभदायक नहीं है क्योंकि OM से अधिक उत्पादन करके फर्म अपेक्षाकृत अधिक लाभ उठा सकती है। परन्तु OM_1 पर पहुँचकर फर्म आगे उत्पादन बंद कर देगी। OM_1 उत्पादन का वह स्तर है जहां संतुलन की दोनों शर्ते पूरी हो जाती हैं। यदि फर्म OM_1 से अधिक उत्पादन करना चाहती है तो उसे हानि उठानी पड़ेगी क्योंकि संतुलन बिन्दु B के बाद सीमांत आगम से सीमांत लागत बढ़ जाती है। इस प्रकार फर्म अपने लाभ को M_1B कीमत पर तथा OM_1 उत्पादन स्तर पर अपने लाभों को अधिकतम करती है।

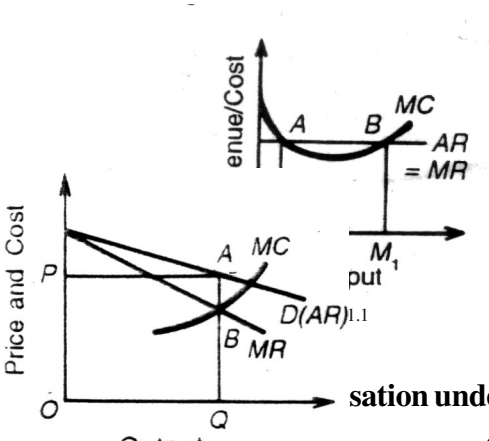

चित्र 1.1

चित्र 1.2

एकाधिकार के अन्तर्गत लाभ अधिकतमकरण

sation under Monopoly)

वस्तु का एक विक्रेता (अथवा उत्पादक) होने पर एकाधिकार फर्म स्वयं उद्योग होती है। इसलिए इसका मांग वक्र दाई ओर नीचे ढ़ालू होता है, यह मानकर कि इसके ग्राहकों की रूचियां और आमदनियां दी हुई हैं। वह कीमत बनाने वाली (price-maker) होती है जो अपने अधिकतम लाभ के लिए कीमत निश्चित कर सकती है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि वह कीमत और उत्पादन की मात्रा दोनों ही निश्चित कर सकती है। यह दोनों में से एक बात कर सकती है। यदि फर्म अपने उत्पादन स्तर को चुन लेती है, तो उसकी कीमत को उसकी वस्तु की मार्किट मांग निर्धारित करती है। अथवा, यदि वह अपनी वस्तु की कीमत निश्चित करती है, तो उसके उत्पादन का स्तर इस बात से निर्धारित होता है कि उपभोक्ता उस कीमत पर वस्तु की कितनी मात्राएं खरीदेंगे। स्थिति कुछ भी हो, एकाधिकार फर्म का अन्तिम उद्देश्य अपने लाभों को अधिकतम करना है। एकाधिकार फर्म की संतुलन की शर्ते हैं:–

(1) MC = MR < AR (कीमत), और (2) MR वक्र को MC वक्र नीचे से काटता है।

चित्र 1.2 में लाभ अधिकतम करने का उत्पादन स्तर OQ है और लाभ अधिकतम करने की कीमत OP हैं। यदि OQ से अधिक उत्पादन किया जाता है तो MR से MC अधिक होगी तथा लाभ का स्तर गिरेगा। यदि लागत और मांग की स्थितियां समान रहें तो फर्म को कीमत और उत्पादन परिवर्तित करने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं होता है और फर्म संतुलन में होती है।

लाभ अधिकतमकरण सिद्धान्त की आलोचनाएं
(Criticisms of Profit Maximisation Theory)

अर्थशास्त्रीयों ने लाभ अधिकतमकरण सिद्धान्त की निम्नलिखित आधार पर कड़ी आलोचनाएं की हैं:

1. लाभ अनिश्चित (Profits uncertain)– अधिकतम लाभ के सिद्धान्त में यह माना गया है कि फर्मे अपने अधिकतम लाभ के स्तर के बारे में निश्चित हैं। परन्तु लाभ सबसे अधिक अनिश्चित है क्योंकि ये आय-प्राप्ति और भविष्य में होने वाली लागतों के अन्तर से प्राप्त होते हैं। अतः फर्मो के लिए अनिश्चितता की परिस्थितियों के अन्तर्गत अपने लाभों को अधिकतम कर पाना सम्भव नहीं है।

2. आंतरिक संगठन से कोई संबद्धता नहीं (No relevance to internal organisation)– फर्म के इस उद्देश्य की फर्म के आन्तरिक संगठन से थोड़ी या सीधे रूप में कोई संबद्धता नहीं है। उदाहरणार्थ, कुछ प्रबन्धक स्पष्ट तौर पर इतना अधिक व्यय करते हैं कि यदि उस व्यय को बचाया जाए तो फर्म के मालिक का धन और लाभ दोनोंको अधिकतम किया जा सकता है। निगमों के प्रबन्धकों को प्रबन्धकीय कार्यवाइयों के उद्देश्यों के रूप में फर्म की कुल परिसम्पत्तियों की बढ़ोत्तरी और बिक्री पर बल देते देखा गया है। इसके अलावा फर्मो के प्रबन्धक मांग कम होने पर लागत कम करने और कार्यकुशलता बढ़ाने के अभियान शुरू करते हैं। स्टॉकधारियों के बहुत अधिक धन के प्रतिकूल प्रबन्धकीय कार्यवाहियां एक स्थापित तथ्य मानी जाती हैं।

3. पूर्ण ज्ञान नहीं (No perfect knowledge)– अधिकतम लाभ की परिकल्पना इस मान्यता पर आधारित है कि सभी फर्मो को न केवल उनकी अपनी अपितु अन्य फर्मो की लागतों और आगमों का भी पूर्ण ज्ञान होता है। परन्तु वास्तव में फर्मो को उन परिस्थितियों का पर्याप्त ज्ञान नहीं होता जिसके अन्तर्गत वे कार्य करती हैं। अधिक से अधिक उन्हें अपनी उत्पादन - लागत का पता हो सकता है लेकिन वे बाजार मांग वक्र के बारे में निश्चित नहीं हो सकते। वे सदा अनिश्चितता की परिस्थितियों में कार्य करती है और इस तरह अधिकतम लाभ का सिद्धान्त कमजोर है, क्योंकि इस सिद्धान्त में यह माना गया है कि फर्म हर चीज के बारे में निश्चित है।

4. आनुभविक प्रमाण अस्पष्ट (Empirical evidence vague)– लाभ अधिकतमकरण पर आनुभाविक प्रमाण अस्पष्ट है। बहुत सी फर्मे लाभों को एक मुख्य उद्देश्य नहीं मानती हैं। आधुनिक फर्मो का कार्य इतना जटिल होता है कि वे केवल लाभ अधिकतमकरण के बारे में नहीं सोचती हैं। उनकी मुख्य समस्याएं नियंत्रण और प्रबंधन की होती हैं। इन फर्मो के प्रबंध का कार्य उद्यमियों द्वारा नहीं बल्कि मैनेजर और शेयरहोल्डरों द्वारा किया जाता है। वे क्रमशः अपने वेतन और लाभांशों में अधिक रूचि रखते हैं। क्योंकि आधुनिक फर्मो में स्वामित्व का नियंत्रण से पर्याप्त प थक्करण (Separation) होता है, इसलिए उनका कार्यकरण लाभों को अधिकतम करने के लिए नहीं किया जाता है।

5. फर्में MC और MR के बारे में नहीं जानती (Firms do not know about MC and MR)– वास्तविक व्यावसायिक जगत में फर्मे सीमांत लागत और सीमांत आगम के आगणन की चिंता नहीं करती हैं। बहुत सी तो इन शब्दों से परिचित नहीं होती हैं। अन्य अपने मांग और आगम वक्रों के बारे में नहीं जानती हैं। और कुछ अन्य को अपने लागत ढांचे के बारे में पर्याप्त सूचना नहीं होती है। हाल और हिच (Hall and Hitch) का प्रयोगसिद्ध प्रमाण यह दर्शाता है कि फर्मो के प्रबंधको को सीमान्त लागत और सीमान्त आगम का ज्ञान नहीं है। आखिर वे अनुमान लगाने वाली लालची मशीनें नहीं है। जैसाकि सी. जे. हाकिन्स ने ठीक ही कहा है, "यह तर्क देना कि सभी फर्मो का उद्देश्य अधिकतम लाभ के अलावा और कुछ नहीं है, तर्कशास्त्र अथवा अन्तद'ष्टि में उसी तरह कोई बेहतर आधार नहीं रखता जिस तरह यह तर्क देना कि सभी विद्यार्थियों का उद्देश्य सही और गलत तरीके से परीक्षा में अधिकतम अंक प्राप्त करना होता है।"

6. औसत लागत का नियम लाभों को अधिकतम करता है (Principle of average cost maximises profits)– हाल और हिच ने यह जाना कि फर्मे अपने अल्पकालीन लाभों को अधिकतम करने के लिए MC और MR की समानता का नियम लागू नहीं करती हैं। परन्तु वे दीर्घकाल में लाभों को अधिकतम करने का उद्देश्य रखती हैं। इसके लिए वे सीमांत नियम को लागू न करके अपनी कीमतें औसत लागत नियम पर निश्चित करती हैं। इस नियम के अनुसार, कीमत = AVC + AFC + profit margin (जो सामान्य तौर से 10% होता है) इस प्रकार, लाभ अधिकतमकरण फर्म का मुख्य उद्देश्य औसत लागत नियम के आधार पर कीमत निश्चित करना और उसी कीमत पर अपना उत्पादन बेचना है।

7. स्थैतिक सिद्धांत (Static theory)– फर्म का नव-क्लासिकी सिद्धांत स्थैतिक प्रकृति का है। यह अल्प अवधि अथवा दीर्घ अवधि की मियाद (duration) के बारे में नहीं बताता है। नव-क्लासिकी फर्म का समय-अंतराल समान और स्वतंत्र समय अवधियों का होता है। निर्णयों को कालगत तौर से स्वतंत्र लिया जाता है। यह लाभ अधिकतमकरण सिद्धांत की बड़ी कमी है। वास्तव में निर्णय "कालगत तौर से परस्पर निर्भर" होते हैं। इसका अभिप्राय है कि किसी एक अवधि में निर्णय पिछली अवधियों के निर्णयों द्वारा प्रभावित होते हैं, जो आगे फर्म के भविष्य में निर्णयों को प्रभावित करेंगे। इस परस्पर निर्भरता की नव - क्लासिकी सिद्धांत द्वारा उपेक्षा की गई है।

8. अल्प-एकाधिकार फर्म पर लागू नहीं (Not applicable to oligopoly firm)– वास्तव में आर्थिक सिद्धान्त में अधिकतम लाभ का उद्देश्य पूर्णतया प्रतियोगी या एकाधिकारी या एकाधिकारी प्रतियोगात्मक फर्मो के लिए है। परन्तु अल्प - एकाधिकार फर्म के मामले में इसकी आलोचना के कारण इसे छोड़ दिया गया है। इस प्रकार इस सिद्धान्त में अर्थशास्त्रियों द्वारा जो विभिन्न उद्देश्य लाए गए हैं वे अल्प–एकाधिकार या द्वि–एकाधिकार से ही सम्बन्धित हैं।

9. विभिन्न उद्देश्य (Varied objectives)– नव–क्लासिकी फर्मो और आधुनिक निगमों के उद्देश्यों के मध्य भिन्नता का आधार इस तथ्य से उत्पन्न होता है कि अधिकतम लाभ का उद्देश्य उद्यमी के व्यवहार से सम्बन्धित है जबकि आधुनिक निगम शेयरधारकों और प्रबन्धकों की अलग–अलग भूमिका के कारण भिन्न उद्देश्यों से प्रेरित होते हैं। इसमें शेयरधारक व्यावहारिक रूप से प्रबन्धकों की कार्यवाही पर कोई प्रभाव नहीं डालते। 1932 के शुरू में बर्ले और मीन्स ने बताया कि प्रबन्धकों के उद्देश्य शेयरधारकों से भिन्न होते हैं। प्रबन्धकों की अधिकतम लाभ प्राप्त करने में कोई रूचि नहीं होती। वे फर्म को शेयरधारकों की बजाय अपने हित में चलाते हैं। शेयरधारक प्रबन्धकों पर ज्यादा प्रभाव नहीं डाल सकते क्योंकि उन्हें कम्पनियों के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं होती। अधिकांश शेयरधारक कम्पनी की वार्षिक आम बैठक में उपस्थित नहीं हो सकते। इस प्रकार आधुनिक फर्में अपने आन्तरिक संगठन से सम्बन्धित उद्देश्यों से प्रेरित होती हैं।

इसकी मान्यताएं (Its Assumptions)

लाभ अधिकतमकरण का सिद्धांत निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित है:

1. फर्म का उद्देश्य लाभों को अधिकतम करना है जहां फर्म के आगम और लागतों का अन्तर लाभ हैं।
2. उद्यमी स्वयं ही फर्म का मालिक है।
3. उपभोक्ताओं की रूचियां और आदतें दी हुई और स्थिर हैं।
4. उत्पादन की तकनीकें दी हुई हैं।
5. फर्म एक अकेली, पूर्णतया विभाज्य और स्टैंडर्ड वस्तु का उत्पादन करती है।
6. प्रत्येक कीमत पर वस्तु की कितनी मात्रा बेची जा सकती है इसका फर्म को पूर्ण ज्ञान होता है।
7. फर्म को अपनी मांग और लागतों के बारे में निश्चितता से मालूम है।
8. नयी फर्में केवल दीर्घकाल में ही उद्योग में प्रवेश कर सकती है। अल्पकाल में फर्मो का प्रवेश संभव नहीं है।
9. फर्म अपने लाभों का अधिकतमकरण कुछ काल–क्षितिज (time horizon) में करती है।
10. अल्पकाल और दीर्घकाल दोनों में फर्म अपने लाभों का अधिकतमकरण करती है।

विलियमस का प्रबंधकीय विवेक सिद्धान्त
(Williamson's Managerial Discretion Theory)

विलयमसन ने प्रबंधकीय–उपयोगिता–अधिकतरण मॉडल का विकास किया है। यह प्रबंधकीय सिद्धान्तों में से एक है जिसको उपयोगिता अधिकतमकरण (utility maximisation) सिद्धान्त भी कहते हैं।

बड़ी आधुनिक फर्मो में, शेयरधारकों और प्रबन्धकों के दो अलग–अलग समूह होते हैं। शेयर–धारक अपने निवेश पर अधिकतम प्रतिफल चाहते हैं। जिससे कि अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सके। दूसरी ओर प्रबन्धक अपने उपयोगिता कार्यो में अधिकतम लाभ की अपेक्षा अन्य पहलूओं पर भी ध्यान देते हैं। इस प्रकार प्रबंधक न केवल अपनी आय अपितु अपने स्टाफ

की संख्या और उन पर किए जाने वाले व्यय में भी रूचि रखते हैं। अतः विलियमसन का सिद्धान्त प्रबन्धकों की उपयोगिता के अधिकतम होने से सम्बन्धित है जो कि स्टाफ पर होने वाले व्यय तथा उनको मिलने वाली आय एवं विवेक - निधियों पर निर्भर है। "जहां तक पूंजी बाजार में दबाव और वस्तु बाजार में प्रतियोगिता अपूर्ण है, इसलिए प्रबन्धक अपने विवेक से लाभों के अलावा अन्य उद्देश्यों को प्राप्त करते हैं।"

प्रबंधक एक विस्त त रेंज के चरों से उपयोगिता प्राप्त करते हैं। इसके लिए विलयमसन व्यय प्राथमिकताओं (expenses preference) की धारणा को प्रस्तुत करता है। इसका अभिप्राय है कि "प्रबंधक, फर्म के कुछ संभावित लाभों को उन मदों पर अनावश्यक व्यय करने के लिए जिनसे वे व्यक्तिगत तौर से फायदा उठाते हैं, प्रयोग करके संतुष्टि प्राप्त करते हैं।" अधिकतम उपयोगिता के अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रबन्धक फर्मो के संसाधनों को तीन प्रकार से दिशा निर्देश देते हैंः

1. प्रबन्धक अपने स्टाफ तथा उनका वेतन बढाना चाहता है। अधिक स्टाफ का महत्त्व इसलिए होता है क्योंकि इससे प्रबन्धक को अधिक वेतन, अधिक प्रतिष्ठा और अधिक सुरक्षा मिलती है। प्रबंधकों द्वारा स्टाफ व्यय को S द्वारा दिखाया जाता है।

2. अपनी उपयोगिता को अधिकतम करने के लिए प्रबन्धक सुन्दर लड़कियों को निजि सचिव बनाने, कम्पनी कारों, कम्पनी फोनों, कर्मचारियों के लिए अन्य सुविधाएं प्रदान कराने में लग जाते हैं। विलियमसन ने ऐसे व्ययों को 'प्रबन्धन - शिथिलता' (management slack – M) माना है।

3. प्रबन्धक अग्रिम निवेश करने के लिए अथवा जो कम्पनी परियोजना उनको भाती है उन्हें विशाल करने के लिए "विवेकाधीन कोष" (discreationary funds) बनाना चाहते हैं। विवेकाधीन लाभ अथवा निवेश (D) वह राशी है जो कि कर शेयरधारकों को लाभांश देने के बाद फर्म के प्रभावी नियन्त्रण के लिए प्रबन्धक के पास शेष रहती है।

इस प्रकार प्रबन्धक का उपयोगिता फलन निम्नलिखित हैः

$$U = f(S, M, D)$$

यहां U उपयोगिता फलन है, S स्टाफ व्यय है, M प्रबन्धन–शिथिलता और D विवेकाधीन निवेश हैं। ये निर्णय चर (S, M, D) धनात्मक (positive) उपयोगिता प्रदान करते हैं और फर्म सदा उनके मूल्य $S \geq 0, M \geq 0, D \geq 0$ प्रतिबंध की शर्त अधीन चुनती है। विलियमसन यह मानता है कि घटती सीमांत उपयोगिता का नियम लागू होता है। इसलिए जब S, M और D प्रत्येक में व द्धि की जाती है, तो वे प्रबंधक को उपयोगिता की छोटी व द्धियां देते हैं।

इसके अलावा, विलियमसन कीमत (P) को उत्पादन (X), स्टाफ (S) के व्यय और वातावरण की स्थिति के फलन के रूप में मानता है जिसे वह मांग परिवर्तन पैरामीटर (E) कहता है, ताकि

$$P = f(X, S, E)$$

यह सम्बन्ध निम्नलिखित प्रतिबन्ध की शर्तो के अधीन हैः

(क) मांग फलन को ऋणात्मक ढाल वाला माना गया हैः $\delta P/\delta Y < 0$; (ख) स्टाफ के व्ययों से फर्म की वस्तु की मांग बढ़ने में सहायता मिलती हैः $\delta P/\delta S < 0$ तथा (ग) मांग परिवर्तन पैरामीटर E में व द्धि से मांग बढ़ती हैः- $\delta P/\delta E > 0$

ये संबंध बताते हैं कि X के लिए मांग P के साथ ऋणात्मक तौर से संबंधित है, परन्तु S और E के साथ धनात्मक तौर से संबंधित है। जब मांग बढ़ती है, तो उत्पादन और स्टाफ पर व्यय भी बढ़ेगें जो फर्म की लागतों को बढ़ा देंगे, और परिणामस्वरूप कीमत बढ़ेगी और विलोमशः।

अपने मॉडल को औपचारिक रूप देने के लिए, विलियमसन चार विभिन्न प्रकार के लाभों को लेता हैः वास्तविक, रिर्पोटिड, न्यूनतम आवश्यक लाभ, और विवेकाधीन (discreationary) लाभ। यदि R = revenue, C = total production costs और T = taxes, तो वास्तविक लाभ,

$$\pi_A = R - C - S$$

यदि प्रबंधात्मक आय (M) को वास्तविक लाभों से घटा दिया जाए तो प्राप्त होत हैं, रिर्पोटिड लाभ,

$$\pi_R = \pi_A - M = R - C - S - M$$

न्यूनतम आवयश्यक लाभ, π_0 टैक्स देने के बाद लाभों का न्यूनतम स्तर है जो शेयरहोल्डरों को अवश्य प्राप्त होने चाहिए ताकि वे फर्म के शेयरों को अपने पास रख सकें। विवेकाधीन लाभ (D) वे होते है जो प्रबंधक के पास कर और शेयरहोल्डरों को लाभांश देने के बाद बचते हैं, इसलिए

$$D = \pi_R - \pi_0 - \Upsilon$$

विलियमसन के उपयोगिता अधिकतमकरण मॉडल को चित्र द्वारा व्यक्त करने के लिए, सरलता के लिए यह मान लिया जाता है कि

$$W = f(S, D)$$

ताकि विवेकाधीन लाभों (D) को अनुलंब अक्ष पर और स्टाफ व्यय (S) का क्षैतिज अक्ष पर चित्र 1.3 पर मापा गया है। FC संभाव्यता वक्र है जो प्रबंधक को प्राप्य D और S के संयोगों को दर्शाता है। इसें लाभ–स्टाफ, वक्र भी कहते हैं। UU_1 और UU_2 वक्र प्रबंधक के उदासीनता वक्र हैं जो D और S के संयोगों को दिखाते हैं। जब हम लाभ–स्टाफ वक्र पर बिन्दु F से ऊपर की ओर गति करते हैं, तो लाभ और स्टाफ व्यय दोनों बढ़ते हैं जब तक कि बिन्दु P नहीं पहूँच जाता है। फर्म के लिए P लाभ अधिकतमकरण का बिन्दु है, जहाँ SP अधिकतम लाभ का स्तर है जब OS स्टाफ व्यय किए जाते हैं। परन्तु फर्म का संतुलन तब होता है जब प्रबंधक का उच्चतम वक्र UU_2, और FC वक्र एक दूसरे को M बिन्दु पर स्पर्श करते हैं। इस बिन्दु M पर प्रबंधक की उपयोगिता अधिकतम हो जाती है। विवेकाधीन लाभ OD = (S_1 M) अधिकतमकरण लाभों SP से कम हैं, परन्तु स्टाफ पारिश्रमिक (emoluments) OS_1, अधिकतम हो जाता है। विलियमसन यह बताता है कि कर, व्यावसायिक स्थितियों में परिवर्तन आदि कारक संभाव्यता वक्र को प्रभावित करके इष्टतम स्पर्श बिन्दु, जैसे चित्र में M_1 को शिफ्ट कर सकते हैं। इसी प्रकार स्टाफ , उसके पारिश्रमिक, शेयरहोल्डरों के लाभों में परिवर्तन आदि घटक उपयोगिता फलन की आकृति परिवर्तित करके इष्टतम स्थिति को शिफ्ट कर सकते हैं।

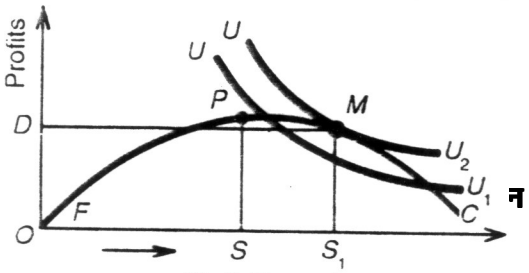

चित्र 1.3

विलियमसन ने अपने उपयोगिता अधिकतमकरण सिद्धान्तों का अनेक प्रमाणों द्वारा समर्थन किया है जो उसके मॉडल के साथ सामान्य तौर से मेल खाते हैं। इस प्रकार उसका सिद्धान्त आनुभविक तौर से अन्य प्रबंधकीय सिद्धान्तों की तुलना में अधिक सही है।

यह मॉडल बोमल के विक्रय–अधिकतमकरण सिद्धान्त से भी श्रेष्ठ है, क्योंकि यह बोमल के सिद्धान्तों में पाए जाने वाले तत्त्वों की भी व्याख्या करता है। बोमल की तरह विलियमसन विक्रय अधिकतमकरण को एक एकल मापदण्ड नहीं लेता बल्कि प्रबंधक का एक साधन मानता है जिससे स्टाफ और उसकी आय को बढाया जा सके। यह व्याख्या अधिक वास्तविक है।

फिर, विलियमसन के मॉडल में लाभ अधिकतमकरण मॉडल की तुलना में उत्पादन अधिक और कीमत और लाभ कम होते हैं। सिनबर्सटन ने यह दर्शाया है कि विलियमसन का मॉडल पूर्ण अथवा शुद्ध प्रतियोगिता की स्थितियों में सामान्य लाभ अधिकतमकरण मॉडल के परिमाणों को सुरक्षित रखता है।

इसकी कमियां

(Its Weaknesses)

परन्तु इस मॉडल की कुछ धारणात्मक कमियां हैं।

प्रथम, विलियमसन अपने संभाव्यता वक्र की व्युत्पत्ति के आधार को स्पष्ट नहीं करता है।

विशेषकर, वह लाभ–स्टाफ संबंध से प्रतिबंध (constraint) को दर्शाने में असफल रहा है, जैसा कि संभाव्यता वक्र की आकृति द्वारा दिखाया गया है।

दूसरे, वह उपयोगिता वक्र में स्टाफ और प्रबंधक के पारिश्रमिकों को इकट्ठा कर देता है। इस प्रकार प्रबंधक के गैर–आर्थिक और आर्थिक लाभों को मिला देने से उपयोगिता फलन अस्पष्ट बन जाता है। इन कठिनाइयों को तीन–आयामी (three dimensional) चित्र द्वारा दूर किया जा सकता हैं। परन्तु यह विश्लेषण को बहुत जटिल बना देगा।

तीसरे, यह मॉडल अल्पाधिकारी परस्पर निर्भरता और अल्पाधिकार स्पर्धा विचार नहीं करता है।

चौथे, हाकिन्स के अनुसार, अधिकतर अर्थशास्त्री विलियमसन के प्रबंधकीय विवेक सिद्धान्त को आगे बढाने के इच्छुक नहीं हैं, इस ज्ञान के कारण कि इतने घटक (जैसे लाभ, बिक्री, उत्पादन, व द्धि, स्टाफ की संख्या और बढ़िया आफिसों और कारों पर व्यय) उद्योगों में लोगों को उपयोगिता देते हैं कि वे ऐसे मॉडल पर समाप्त हो जाएं जो कोई सुनिश्चित परिणाम देने में असमर्थ हो।

बोमल का विक्रय अधितमकरण मॉडल
(Baumol's Sales Maximisation Model)

प्रो. बोमल ने अपनी पुस्तक *Business Behaviour, Value and Growth (1967)* में विक्रय अधिकतमकरण पर आधारित फर्म का प्रबंधकीय सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। उसने विक्रय अधिकतमकरण के दो मॉडलों की व्याख्या की हैः एक स्थैतिक मॉडल और दूसरा गत्यात्मक मॉडल। हम केवल उसके स्थैतिक मॉडल के रूपान्तर एकल वस्तु विज्ञापन रहित, विज्ञापन के साथ और बहुवस्तु मॉडलों का विश्लेषण करेंगे।

इसकी मान्यताएं (Its Assumptions)

यह मॉडल निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित हैः

1. फर्म की एक समय अवधि सीमा है।
2. फर्म दीर्घकाल में अपने कुल आगम को अधिकतम करने का उद्देश्य रखती है जो उसके लाभ प्रतिबंध (profit constraint) से बाध्य हैं।
3. फर्म का न्यूनतम लाभ प्रतिबंध उसके शेयरों के बाजार मूल्य के रूप में प्रतियोगितात्मक तौर से निश्चित किया जाता है।
4. फर्म अल्पाधिकारात्मक है जिसके लागत वक्र U-आकृति के हैं और मांग वक्र नीचे की ओर ढालू है। इसके कुल लागत और आगम वक्र भी परंम्परागत किस्म के हैं।

मॉडल (The Model)

अमेरिका में अल्पाधिकार फर्मो की अपनी जांचों से बोमल ने पाया कि वे विक्रय अधिकतमकरण के उद्देश्य का पालन करती हैं। बोमल के अनुसार, आधुनिक निगमों में स्वामित्व और नियंत्रण के अलग हो जाने से, लाभों की लागत पर भी, कंपनी विक्रय बढ़ाकर, प्रबंधक प्रतिष्ठा और ऊँचे वेतन चाहते हैं। अनेक फर्मो का परामर्शदाता होने के कारण, बोमल ने यह देखा कि जब व्यवसायी प्रबंधकों से पूछा गया कि उनका व्यवसाय पिछले वर्ष कैसा रहा, तो वे अक्सर उत्तर देते, "हमारे विक्रय तीन मिलियन डॉलर बढ़ गए।" फिर, कोई अन्य प्रबंधक यह उत्तर देते, "उनके विक्रय बढ़े (अथवा कम) रहे।" अपने लाभों के बारे में यदि बात करते तो केवल बाद में विचार के रूप में। अतः बोमल के अनुसार, आगम अथवा विक्रय अधिकतमकरण, न कि लाभ अधिकतमकरण, फर्मो के वास्तविक व्यवहार से मेल खाता है। परन्तु प्रबंधन का अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ध्येय विक्रय अधिकतम माना जाता है। विक्रय अधिकतम केवल साधन ही नहीं है बल्कि साध्य भी हैं। अपने सिद्धान्त के पक्ष में वह अनेक तर्क देता है। उसके अनुसार, एक फर्म अपनी बिक्री के आकार को बहुत महत्त्व देती है तथा बिक्री के कम होने पर बहुत चिंतित होती है। यदि फर्म की बिक्री कम होनी प्रारंभ हो जाती है तो बैंक, ऋणदाता, तथा पूँजी मार्किट उसे वित्त प्रदान करने को तैयार नहीं होते हैं। इसके अपने वितरक और व्यापारी इसकी वस्तुओं में दिलचस्पी लेना बंद कर देते हैं, तथा उपभोक्ता भी इसकी वस्तुओं को नहीं खरीदना चाहते हैं क्योंकि यह घाटे में जा रही होती है। परन्तु यदि फर्म की बिक्री अधिक हो तो फर्म

का आकार बढ़ता है जिसका अभिप्राय इसमें लाभ अधिक हैं।

एकल वस्तु के साथ मॉडल (Model with singal Product)– अधिकतम विक्रय में बोमल का अभिप्राय अधिकतम कुल आगम है। इसका अर्थ उत्पादन की अधिक मात्राओं का विक्रय नहीं बल्कि मौद्रिक विक्रय (रूपये, डालर, आदि) में व द्धि है। विक्रय अधिकतम लाभ के बिन्दु तक बढ़ सकता है जहाँ सीमान्त लागत और सीमान्त आगम बराबर होते हैं। परन्तु यदि इसके आगे बढ़ा दिया जाए तो लाभ कम करके मोद्रिक आय बढ़ सकती है। पर अल्पाधिकारी फर्म यह चाहती है कि उसके मौद्रिक विक्रय बढ़ें चाहे उसे न्यूनतम लाभ हो। न्यूनतम लाभों से अभिप्राय अधिकतम लाभों से कम लाभ है। न्यूनतम लाभ फर्म की विक्रय अधिकतम करने की आवश्यकता द्वारा निर्धारित होते हैं और बिक्री में हो रही व द्धि को कायम रखने के लिए हैं। यह भविष्य की बिक्री में रूपया लगाने के लिए भी आवश्यक होते हैं। फिर, वे फर्म की अन्य वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए तथा शेयर पूँजी पर लाभांश देने के लिए भी जरूरी होते हैं। अतः न्यूनतम लाभ एक फर्म के अधिकतम लाभ के प्रतिबंध का कार्य करते हैं। बोमल के अनुसार, "अधिकतम आगम केवल उस उत्पादन पर प्राप्त होगा जहाँ माँग की लोच ईकाई के बराबर होगी अर्थात् यहाँ सीमान्त आगम शून्य होगा। यही शर्त है जब अधिकतम लाभ नियम की सीमान्त लागत आगम समान होने की शर्त का स्थान लेती है।" यह चित्र 1.4 में दिखाया गया है जहाँ अधिकतम फर्म OQ मात्रा उत्पादित करती है जिसके MC तथा MR वक्र P बिन्दु पर मिलते हैं। परन्तु विक्रय–अधिकतम फर्म OQ_1 मात्रा उत्पादित करेगी जहाँ MR वक्र शून्य है।

बोमल के मॉडल को चित्र 1.5 में दिखया गया है, जहाँ TC कुल लागत वक्र है, TR कुल आगम वक्र, TP कुल लाभ वक्र तथा MP न्यूनतम लाभ अथवा लाभ प्रतिबंध रेखा है। फर्म TP वक्र के सबसे ऊँचे बिन्दु B के अनुरूप उत्पादन को OQ स्तर पर

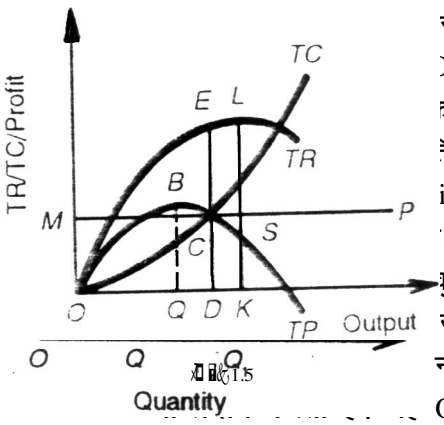

रती है। परन्तु फर्म का उद्देश्य अपने विक्रय को अधिकतम करना होता है, न कि लाभों को। इसका OK है, जहाँ TR वक्र के सबसे ऊँचे बिन्दु पर कुल आगम KL अधिकतम है। यह विक्रय अधिकतम तम उत्पादन OQ से अधिक है। परन्तु विक्रय बन्ध द्वारा बाध्य होती है (Sales maximisation is it constraints)। मान लो कि न्यूनतम लाभ स्तर है। OK उत्पादन विक्रय अधिकतम नहीं करेगा कुल लाभ KS द्वारा पूरे नहीं किए जा रहे। विक्रय उत्पादन का वह स्तर उत्पादित करना चाहिए जो नहीं करता बल्कि इसके अनुरूप अधिकतम आगम OD उत्पादन का स्तर है, जहाँ न्यूनतम लाभ DC (=OM) कुल आगम की DE की मात्रा की कीमत DE/OD (कुल आगम/कुल उत्पादन) पर अनुरूप है।

अल्पाधिकार का बोमल मॉडल यह बताता है कि अधिकतम विक्रय TR उत्पादन OD से अधिकतम लाभ–उत्पादन OQ थोड़ा होगा और कीमत अधिक होगी। विक्रय अधिकतम में कीमत कम होने का कारण यह है कि कुल आगम तथा कुल उत्पादन दोनों ही ऊँचे हैं, जबकि लाभ अधिकतम में कुल उत्पादन कुल आगम की अपेक्षा बहुत कम है। मान लीजिए कि चित्र में QB को TR के साथ रेखा द्वारा जोड़ दिया जाय। बोमल के अनुसार, "यदि न्यूनतम लाभ के बिन्दु पर फर्म आवश्यक न्यूनतम से अधि ाक लाभ कमाती है, तो वि य अधिकतम करने वाले को अपनी कीमत कम करने तथा भौतिक उत्पादन बढ़ाने से लाभ होगा।"

विज्ञापन के साथ मॉडल (Model with Advertising)– आगे बोमल ने यह दर्शाया है कि विक्रय अधिकतमकरण के अन्तर्गत लाभ प्रतिबंध भी विज्ञापन में प्रभावशील होता है और इस प्रकार फर्म के आगम को बढ़ाता है। चित्र 1.6 में विज्ञापन पर व्यय को क्षैतिज अक्ष पर और कुल आगम, लागतें और लाभ अनुलम्ब अक्ष पर लिए गए हैं। TR कुल आगम वक्र है। 45°

रेखा ADC विज्ञापन लागत वक्र है। OC के बराबर अन्य लागतों की एक स्थिर राशि को ADC वक्र में जमा करने से हमें कुल लाभ वक्र TP प्राप्त होता है, जो *TR* वक्र और *TC* वक्र के बीच का अन्तर है। MP न्यूनतम लाभ प्रतिबंध रेखा है। लाभ अधिकतमकरण फर्म OQ विज्ञापन पर खर्च करेगी और इसका कुल आगम OS (= QA) होगा। दूसरी ओर, लाभ प्रतिबंध MP दिया होने पर, विक्रय अधिकतमकरण फर्म OD विज्ञापन पर व्यय करेगी और कुल आगम OT (=DE) कमाएगी। इस प्रकार, विक्रय अधिकतमकरण फर्म विज्ञापन पर लाभ - अधिकतम फर्म से अधिक व्यय करती है (OD>OQ), और उससे अधिक आगम कमाती है। (DE>QA), लाभ प्रतिबंध स्तर MP पर। अतः विक्रय अधिकतम करने वाली फर्म को अपने विज्ञापन व्यय को बढ़ाने में सदैव लाभ होगा जब तक कि लाभ प्रतिबंध उसे रोक नहीं देता है।

स्थिर लागतों के साथ मॉडल (Model with Fixed Costs)— बोमल की विक्रय—अधिकतमकरण फर्म लाभ—अधिकतमकरण फर्म से अधिक वास्तविक है, क्योंकि यह स्थिर लागतों में परिवर्तनों से प्रभावित होती है, जैसा कि वास्तविक व्यवसायिक फर्मो के बारे में पाया जाता है। नव-क्लासिकी लाभ-अधिकतमरण सिद्धान्त यह मानता है कि अल्पकाल में स्थिर लागतों में परिवर्तनों से उत्पादन प्रभावित नहीं होता है। उदाहरणार्थ, ऐसी फर्म पर एक मुश्त (lumpsum) कर लगाने से उसकी कीमत और उत्पादन प्रभावित नहीं होंगे। बल्कि यह एकमुश्त कर का सारा भार उठा लेगी। परन्तु बोमल यह बल देकर कहता है कि यदि एकमुश्त लगाने से स्थिर लागतें अल्पकाल में बढ़ती है तो विक्रय अधिकतमकरण फर्म अपनी वस्तु की कीमत बढ़ाएगी और उत्पादन कम कर देगी। इसे चित्र 1.7 में समझाया गया है जहां TP फर्म का कुल वक्र है। न्यूनतम लाभ प्रतिबंध रेखा MP है जो यह व्यक्त करती है कि OQ_1 उत्पादन बेचकर फर्म को न्यूनतम लाभ OM आवश्यक माने चाहिए। मान लीजिए कि सरकार LT राशी के बराबर फर्म पर एकमुश्त कर लगाती है, जिससे इसका लाभ वक्र TP नीचे की ओर TP_1 पर चला जाता है और फर्म अपना उत्पादन OQ_1 से कम कर OQ_2 देती है। फर्म अपनी वस्तु की कीमत बढ़ा देगी और कर को उपभोक्ताओं को हस्तांतरित कर देगी। लेकिन एक मुश्त कर के कारण स्थिर लागते बढ़ने से लाभ अधिकतमकरण उत्पादन OQ में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

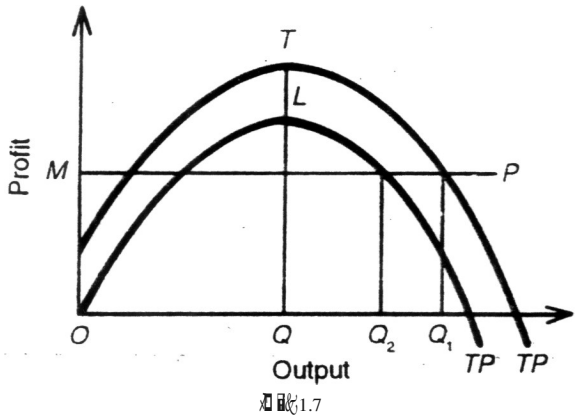

चित्र 1.7

दूसरी ओर बिक्री कर जैसा विशिष्ट कर (Specific Tax) लगाने से लाभ वक्र नीचे बाई ओर शिफ्ट कर पाएगा, जैसा कि चित्र 1.8 में दर्शाया गया है। लाभ प्रतिबंध रेखा MP दी होने पर, विक्रय अधिकतमकरण फर्म अपने उत्पादन को OQ_2 से कम कर OQ_3 कर देगी। यह कीमत को बढ़ा देगी और कर को उपभोक्ताओं में हस्तांतरित कर देगी। लाभ-अधिकतमकरण फर्म भी अपने उत्पादन को OQ से कम करके OQ_1 कर देगी और उसकी कीमत बढा देगी। परन्तु विक्रय अधिकतमकरण फर्म के उत्पादन में कमी लाभ-अधिकतमकरण फर्म की अपेक्षा अधिक होगी, $Q_2Q_3 > QQ_1$

बहुवस्तु मॉडल (Model with Multiproducts)— बोमल ने दर्शाया है कि जहां फर्मे बहुत वस्तुएं उत्पादित करती हैं, विक्रय अधिकतमकरण फर्म अलाभदायक आगतों और निर्गतों से बच सकती है। इसे चित्र 1.9 में व्यक्त किया गया है, जहाँ वस्तु X को क्षैतिज अक्ष पर और वस्तु Y को अनुलम्ब अक्ष पर मापा गया है। PP_1 वक्र X और Y के सभी संयोगों को व्यक्त करता

है जो एक स्थिर व्यय अथवा कुल लागतों से उत्पादित की जा सकती है। वक्र R_1, R_2 और R_3 सम-आगम वक्र हैं जो प्रत्येक वक्र पर X और Y के सभी संयोगों से एक स्थिर आगम देते हैं। PP_1 और R_2 वक्रों का स्पर्श बिन्दु T लाभ अधिकतमकरण का बिन्दु है। यही आगम अधिकतमकरण का बिन्दु है क्योंकि यह उच्चतम प्राच्य सम-आगम वक्र R पर स्थित है जो PP_1 द्वारा व्यक्त किए हुए व्यय के साथ मेल खाता है। इस प्रकार, दोनों प्रकार की फर्में एक ही परिणाम देती हैं जब वे एक जैसी आगतें समान मात्राओं में प्रयोग करती हैं और उन्हें बिल्कुल एक जैसे ही ढंग से नियुक्त करती हैं।

लेकिन बोमल के अनुसार, विक्रय अधिकतमकरण फर्म अपने आगम को बढ़ाने के लिए लाभों के अधिकतम स्तर और लाभों के न्यूनतम स्तर (अर्थात् लाभ प्रतिबंध) के बीच अन्तर का प्रयोग करेगी। वह इस अन्तर को "त्यागने-योग्य लाभों का फंड़" कहता है। "अतः प्रत्येक समय फर्म अपने कुल आगम को बढ़ाने के लिए किसी वस्तु के उत्पादन को बढ़ाती है, तो फर्म को त्यागने-योग्य लाभों की अपनी निधियों को अधिक मात्रा में इस्तेमाल करना आवश्यक होता है। इस त्यागने-योग्य लाभों के फंड को विभिन्न निर्गतों, मार्किटों, आगतों आदि के बीच इस तरह अवश्य आवंटित किया जाना चाहिए, जिससे कुल डॉलर विक्रय अधिकतम होते हैं, यह सम्बन्ध संकेत करता है कि विक्रय-अधिकतमकरण फर्म में भी सापेक्षता या अलाभदायक आगतों और निर्गतों से बचना चाहिए, चाहे कुल व्यय और कुल आगम का स्तर कुछ भी हो।"

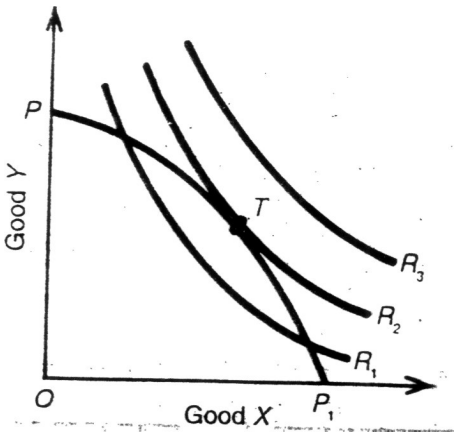

चित्र 1.9

मॉडल के निहितार्थ अथवा श्रेष्ठता (Implications or Superiority of the Model)- बोमल के विक्रय-अधिकतमकरण मॉडल कुछ महत्त्वपूर्ण निहितार्थ भी हैं जो इसे फर्म के लाभ-अधिकतमकरण मॉडल से श्रेष्ठ बनाते हैं।

1. विक्रय— अधिकतमकरण फर्म लाभों की अपेक्षा अधिक विक्रय को प्राथमिकता देती है। क्योंकि यह अपने आगम को अधिकतम उस समय करती है जब इसका MR शून्य होता है, तो यह लाभ अधिकतमकरण फर्म की तुलना में कम

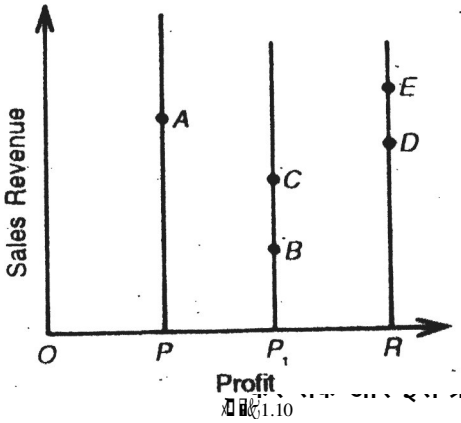

चित्र 1.10

निकलता है कि विक्रय-अधिकतमकरण उत्पादन अधिक होगा लाभ—अधिकतमकरण उत्पादन

ा दिया होने पर, लाभ-अधिकतमकरण फर्म की तुलना में विक्रय-अधिकतमकरण फर्म अधिक
ए विज्ञापन पर अधिक व्यय करेगी।

र्घकालीन कीमत निर्धारण के बीच भी विरोध हो सकता है। अल्पकाल में जब उत्पादन बढ़ाया आगम को कीमत बढ़ाकर बढ़ाया जा सकता है। परन्तु दीर्घकाल में, विक्रय-अधिकतमकरण फर्म वह कीमत को कम रखे ताकि वह मार्किट में बड़े भाग के लिए प्रभावशाली ढ़ंग से प्रतियोगिता
ाकार अधिक आगम कमाए।

इसकी आलोचनाएं (Its Criticisms)— बोमल के विक्रय-अधिकतमकरण मॉडल की कुछ कमियां हैं।

1. **रोसनबर्ग (Rosenberg)** ने बोमल द्वारा विक्रय अधिकतम के लिए लाभ प्रतिबन्ध की आलोचना की है। रोसनबर्ग ने सिद्ध किया है कि एक फर्म के लाभ प्रतिबन्ध को निश्चित रूप से दिखाना कठिन है। इसे रोसनबर्ग के कुछ परिवर्तित चित्र द्वारा चित्र 1.10 में दिखाया गया है। अनुलम्ब अक्ष पर फर्म के विक्रय आगम तथा समानान्तर अक्ष पर लाभ लिए गए हैं। R लाभ प्रतिबन्ध हैं। लाभ प्रतिबन्ध से नीचे कोई भी दो संयोगों में से अधिक लाभ वाला चुना जाएगा। उदाहरण के तौर पर, लाभ स्तर P पर A की अपेक्षा लाभ स्तर P_1 पर B को अधिमान दिया जाएगा। फिर, एक ही लाभ रेखा P_1 पर दो संयोगों

B और C में से B की अपेक्षा C को अधिमान दिया जाएगा क्योंकि C पर बिक्री अधिक होती है। इसी प्रकार, प्रतिबन्ध रेखा R पर D तथा E बिन्दुओं में से E को D की अपेक्षा अविमान दिया जाएगा जो अधिक बिक्री का स्तर है। अतः बोमल के मॉडल में विक्रय अधिकतम तथा न्यूनतम लाभ संयोग को चुनना बहुत कठिन है। जब तक लाभ प्रतिबन्ध से अधिक होते हैं, वे सदैव बिक्री को बढ़ाने के लिए विज्ञापन पर खर्च कर दिए जाएँगे।

2. **शैपहर्ड (Shepherd)** के अनुसार अल्पाधिकर फर्म को किंकित मांग वक्र का सामना करना पड़ता है। यदि किंक काफी बड़ा हो तो कुल आगम और लाभ एक ही उत्पादन स्तर पर अधिकतम होंगे। इसलिए, विक्रय अधिकतम करने वाली और लाभ अधिकतम करने वाली दोनों फर्में उत्पादन के भिन्न स्तरों को उत्पादित नहीं कर रही होंगी। परन्तु हाकिन्स ने दर्शाया है कि यदि फर्म किसी भी प्रकार की गैर-कीमत प्रतियोगिता जैसे अच्छी पैकिंग, फ्री सर्विस, विज्ञापन आदि में व्यस्त होती है तो शैपहर्ड के निष्कर्ष अमान्य हो जाते हैं। उदाहरणार्थ जब विक्रय–अधिकतमकरण फर्म विज्ञापन पर अधिक खर्च करती है, तो उसका उत्पादन लाभ–अधिकतमकरण फर्म से अधिक होगा। ऐसा इसलिए कि विक्रय-अधिकतमकरण फर्म के मांग वक्र का किंक लाभ–अधिकतमकरण फर्म किंक की दाई ओर होगा।

3. हाकिन्स ने दर्शाया है कि बोमल का निष्कर्ष एक विक्रय अधिकतमकर्त्ता एक लाभ अधिकतमकर्त्ता से सामान्यतया अधिक उत्पादित और विज्ञापित करेगा, अमान्य है। हाकिन्स के अनुसार, एक विक्रय अधिकतमकर्त्ता अधिक,कम या समान उत्पादन और अधिक, कम अथवा समान विज्ञापन बजट चुन सकता है। यह कीमत कटौतियों पर निर्भर न होकर मांग की विज्ञापन के साथ अनुक्रियाशीलता (responsiveness) पर निर्भर करता है। यह निष्कर्ष फर्मो द्वारा केवल एक वस्तु अथवा वस्तुओं के एक ग्रुप के उत्पादन के लिए हैं।

4. बहुवस्तुओं के लिए, बोमल तर्क देता है कि आगम और लाभ–अधिकतमकरण के समान परिणाम होते हैं। परन्तु विलियमसन ने यह दर्शाया है कि विक्रय अधिकतमकरण के लाभ–अधिकतमकरण से परिणाम भिन्न होते हैं।

5. बोमल के मॉडल की एक अन्य त्रुटि यह है कि यह अल्पाधिकारी फर्मो की कीमतों की परस्पर निर्भरता की उपेक्षा करता है।

6. कोटसियानिस के अनुसार, बोमल का यह मॉडल अवलोकित मार्किट अवस्थाओं, जिनमें कीमत को काफी समय अवधियों के लिए बेलोच मांग की रेंज में रखा जाता है, की व्याख्या करने में असफल होता है।

7. यह मॉडल न केवल वास्तविक प्रतियोगिता बल्कि विरोधी अल्पाधिकारात्मक फर्मो से संभावित प्रतियोगिता के भय की भी उपेक्षा करता है।

8. फिर, कोटसियानिस के अनुसार, मॉडल यह नहीं दर्शाता है कि एक उद्योग जिसमें सभी फर्में विक्रय अधिकतमकर्त्ता हैं, कैसे संतुलन प्राप्त करेगा। बोमल फर्म और उद्योग के बीच संबंध स्थापित नहीं करता है।

इन कमियों के बावजूद, इसमें कोई संशय नहीं कि विक्रय अधिकतमकरण आधुनिक व्यवसायिक विश्व में फर्मो का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है।

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री की व्यवसाय में भूमिका एवं दायित्व
(Role and Responsibility of Managerial Economist in Business)

प्रबन्धक (Manager) के लिए नियोजन (Planning) तथा निर्णयन (decision) का कार्य अत्याधिक कठिन है क्योंकि व्यवसायिक ईकाईयों (Business Units) को अनिश्चितता के वातावरण में कार्य करना होता है आन्तरिक तथा बाह्य घटक (Internal & External Factors) अनिश्चितता का वातावरण पैदा करता है। कीमत (Price), उत्पाद (Product), विज्ञापन (Advertisement) तथा भौतिक वितरण (Physical Distribution) को आन्तरिक घटकों के अन्तर्गत शामिल किया जाता है इसके विपरीत बाह्य घटकों में सरकार की नीतियां (Govt–Policies) तथा संस्कृति एवं क्रेता व्यवहार (Cultural & Buyer Behaviour) को शामिल किया जाता है। अतः प्रबन्ध को भूतकालीन संमको, वर्तमान सूचनाओं तथा भावी अनुमानों के आधार पर निर्णय लेने होते हैं। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री (Managerial Economist) अनिश्चितता के वातावरण में अधिक सही निर्णय लेने तथा भावी नियोजन करने में सहायता पहुँचाता है। अतः हम कह सकते हैं कि प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री भी व्यवसाय में अहम भूमिका एवं दायित्व निभाता होता है। व्यावसायिक प्रबन्धकों को सही निर्णय लेने अथवा भावी नियोजन करने में प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री अपनी

विशिष्ट योग्यता तथा परिष्कृत अर्थशास्त्रीय विधियों के द्वारा बहुमूल्य सेवा प्रदान करते हैं। यहाँ प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री की विभिन्न भूमिकाओं एवं दायित्वों का अध्ययन किया गया है।

I. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री की व्यवसाय में भूमिका

(Role of a Managerial Economist in Business)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री का प्रमुख कार्य अनिश्चितताओं का पूर्वानुमान लगा कर प्रबन्धकों को सही निर्णय लेने तथा भावी नियोजन करने में सहायता पहुंचाना होता है। एक व्यवसाय को दो तरह के तत्त्व प्रभावित करते हैं—प्रथम, बाह्य तत्त्व एवं द्वितीय आन्तरिक तत्त्व। बाह्य तत्त्वों पर फर्म के प्रबन्धकों का नियन्त्रण नहीं होता है क्योंकि इनका उद्गम फर्म के बाहर होता है। ये तत्त्व व्यावसायिक वातावरण का निर्माण करते हैं। आन्तरिक तत्त्व किसी भी फर्म के अन्दर होते हैं, ये फर्म की आन्तरिक क्रियाओं अथवा कार्यक्षेत्र में होते हैं अतः इन पर फर्म के प्रबन्धकों का नियंत्रण होता है। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री व्यावसायिक वातावरण के अध्ययन तथा इस वातावरण के साथ फर्म को अच्छी तरह समायोजित करने में प्रबन्धकों को सहायता पहूँचाता है। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री प्रबन्धकों के निर्णय कार्य तथा नियोजन में निम्न भूमिका अदा करता है।

1. **विश्लेषक की भूमिका (Role as an analysist)**- साख की मात्रा में व द्धिया कमी का वस्तुओं की माँग पर प्रभाव, बाजार में प्रतियोगिता के घटने या बढ़ने की सम्भावना, सरकार की भावी नीतियाँ का विश्लेषण राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की वर्तमान प्रव त्तियों का ज्ञान, व्यापार चक्र की कौनसी व्यवस्था निकट भविष्य में घटने वाली है, तथा किन-किन क्षेत्रों में बाजार तथा गाहक सम्बन्धी अवसर शीघ्रतापूर्वक बढ़ने अथवा घटने की संभावना इत्यादि की जानकारी अर्थशास्त्र प्रबन्धक व्यावसायिक प्रबन्धक को पहुँचाता है। इसके अतिरिक्त प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री व्यावसायिक वातावरण अथवा बाह्य तत्वों तथा राष्ट्रीय आय, रोजगार, उत्पादन की मात्रा, व्यापार चक्र, सरकारी नीति, अन्तर्राष्ट्रीय प्रव तियों आदि का अध्ययन एवं विश्लेषण करके प्रबन्धकों को अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय करने में सहायता पहुँचाता है।

2. **आर्थिक सूचना प्रदान करना की भूमिका (Role as a Provider of Economic Information)**- प्रतियोगी फर्मो की वस्तुओं के मूल्य एवं उत्पादन, कर दरों, आयात शुल्क, निर्यात शुल्क आदि के सम्बन्ध में आर्थिक सूचनाएँ प्रदान कर प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री अहम भूमिका अदा करता है। सामान्यतया इनके सम्बन्ध में प्रकाशित सामग्री बहुत उपलब्ध रहती है।

3. **आन्तरिक समस्या समाधान की भूमिका (Role as a Guide to Internal Problems)**- प्रबन्धकीय अथर्रशास्त्री प्रबन्धकों की निम्नलिखित समस्याओं के समाधान के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फर्म की क्रियाओं के विस्तार अथवा वस्तु के मूल्य निर्धारण, स्थापित क्षमता के उपयोग, विनियोग, संकुचन।

4. **समंकों के संकलन तथा विश्लेषण की भूमिका (Role as a compiter & Analysist of data)**- प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री को निम्न विशिष्ट कार्य करने के लिए विभिन्न प्रकार के आर्थिक समंकों के संकलन एव विश्लेषण तथा विभिन्न आर्थिक विश्लेषण की विधियों के उपयोग की आवश्यकता होती है।

    1. प्रतियोगी फर्मो की क्रियाओं का विश्लेषण करना।
    2. उत्पादन कार्यक्रम एवं माल नालिकाओं का निर्धारण करना।
    3. विनियोग विश्लेषण एवं पूर्वानुमान करना।
    4. कृषि कार्यो का आर्थिक विश्लेषण करना।
    5. विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का विश्लेषण करना।
    6. कच्चे माल, विदेशी विनियोग, प्रतिभूतियों में विनियोजन, व्यापार, जन-सम्पर्क आदि के सम्बन्ध में सलाह देना तथा फर्म के बाह्य वातावरण सम्बन्धी पूर्वानुमान लगाना।
    7. विक्रय पूर्वानुमान लगाना।
    8. बाजार सर्वेक्षण करना।
    9. पूँजी परियोजना का विश्लेषण करना।

उपर्युक्त कार्यो के अतिरिक्त प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री व्यावसायिक प्रबन्धकों, सरकार, प्रबन्ध सलाहकारों तथा अन्य व्यक्तियों एवं संस्थाओं के लिए अनेक विशिष्ट कार्य भी करता है।

2. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री के दायित्व
(Responsibilities of a Managerial Economist)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री (Managerial Economist) की व्यावसायिक प्रबन्धकों (Business Manager), सरकार (Government) तथा अन्य संस्थाओं (Other Institutions) के प्रति भी विभिन्न दायित्व होते हैं। व्यावसायिक प्रबन्धकों को निर्णय लेने तथा भावी नियोजन करने में प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री अपनी शिक्षा, प्रशिक्षण तथा अनुभव के आधार पर अत्यधिक सहायता पहुँचा सकता है। परन्तु यह कार्य कुशलतापूर्वक करने के लिये आवश्यक है कि वह अपने निम्न दायित्वों को समझे।

1. विशेषज्ञों तथा आर्थिक सूचना के स्त्रोतो के मध्य सम्बन्ध
(Nexus between Specialists & Sources of Information)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री का दायित्व बनता है कि वह उन विशेषज्ञों तथा समंक स्त्रोतो के साथ भी निकट सम्पर्क रखे जो प्रबन्ध के अन्य सदस्यों को तुरन्त उपलब्ध नहीं होते हैं। उसको सन्दर्भ सामाग्री एव स्त्रोतो की तो पूरी जानकारी होनी ही चाहिए तथा इसके साथ–साथ उसका ऐसे व्यक्तियों से सम्पर्क होना चाहिए जो उसके कार्य से सम्बन्धित विशेष क्षेत्रों के विशेषज्ञ हों। प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री की कुशलता इस बात में निहित नहीं है कि वह अज्ञात या अस्पष्ट संदर्भ स्त्रोतों से लम्बी खोज करके जानकारी प्राप्त करे। बल्कि व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा शीघ्रतापूर्वक सही जानकारी प्राप्त करने में वह कितना योग्य है, उसी पर उसकी कुशलता निर्भर करती है। वह जितनी तेजी से वर्तमान जानकारी में नवीन जानकारी जोड़ पाता है उतना ही वह अधिक कुशल माना जाता है।

2. विनियोजित पूँजी पर समुचित लाभ को बनाए रखने की जिम्मेदारी
(Responsibility & Maintaining Adequate return on capital employed)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री का दायित्व यह है कि वह यह समझे कि उसके व्यवसाय का प्रमुख उद्देश्य विनियोजित पूँजी पर लाभ कमाना होता है। यदि वह अपनी शिक्षा तथा बाहरी आलोचना के कारण लाभ के प्रति रक्षात्मक द ष्टिकोण अपनाने लगता है तथा यह तथ्य प्रबन्धकों को ज्ञात हो जाता है तो प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री की फर्म में प्रभावशीलता समाप्त हो जाती है, अतः वह प्रबन्ध की सेवा तब ही सफलतापूर्वक कर सकता है जब उसका स्वयं का द ढ़ विश्वास हो कि व्यवसाय में लाभ होना ही चाहिए। उसका प्रमुख कार्य फर्म की लाभ कमाने की क्षमता बढ़ाने में सहायता पहुँचाना है।

3. फर्म में उसके दायित्व
(Responsibilities of the managerial Economist in the firm)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री को अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए यह आवश्यक है कि प्रबन्ध टोली में अपने कार्यो द्वारा महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर ले। यदि प्रबन्ध टोली में उसकी सलाह एवं सेवाओं की निरन्तर मांग तथा उसे उपयोग किया जाता है तो वह प्रभावशील ढंग से कार्य कर सकता है। प्रबन्धक उसकी सेवाओं की तब ही अधिक मांग करेंगे जब वह अपने विचार तकनीकी शब्दावली में न रखकर उनकी उस शैली में रखे जिसे वे आसानी से समझ सकें।

4. पूर्वानुमान की जिम्मेदारी
(Responsibilities for Forecasting)

प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री का दायित्व यह है कि वह प्रबन्धकों को भविष्य के सम्बन्ध में निर्णय एवं भावी नियोजन करने हेतु सफल पूर्वानुमान प्रस्तुत करे। क्योंकि प्रबन्ध के अधिकांश निर्णय एवं योजनाएँ भविष्य से सम्बन्धित होती हैं तथा भविष्य बहुत अनिश्चित होता है। अतः प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री के लिए यह आवश्यक है कि यह पूर्वानुमानों के सम्बन्ध में अपने दायित्वों को समझे। एक प्रबन्धकीय अर्थशास्त्री बाह्य तत्वों का विश्लेषण करने, व्यावसायिक क्रियाओं का विश्लेषण, विक्रय पूर्वानुमान, बाजार सर्वेक्षण जैसे कार्यो में तभी अधिक सहायक सिद्ध हो सकता है जब वह अपने दायित्वों को अच्छी तरह से समझे तथा निभाएं।

आधारभूत आर्थिक सिद्धान्त
(Fundamental Economic Concept)

सम सीमान्त उपयोगिता नियम
(Law of Equi-Marginal Utility)

एक उपभोक्ता की आवश्यकताएं असीमित होती हैं जबकि उसके साधन सीमित होते हैं। एक उपभोक्ता अपने सीमित साधनों, से अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करना चाहता है। सम-सीमान्त उपयोगिता नियम उपभोक्ता के अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करने के उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक होता है। एक उपभोक्ता अपने सीमित साधनों से उस समय अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करता है तब वह अपनी आय को विभिन्न प्रयोगों में इस प्रकार बाँटता है कि प्रत्येक प्रयोग में व्यय की गई मुद्रा की सीमान्त ईकाई से समान या लगभग समान सीमान्त उपयोगिता प्राप्त होती हो।

1. **परिभाषा (Definitions)**- मार्शल (Marshal) के अनुसार, "यदि किसी व्यक्ति के पास एक ऐसी वस्तु है जो अनेक प्रयोगों में लायी जा सकती है, तो वह उसको विभिन्न प्रयोगों में इस प्रकार बाँटेगा कि सभी प्रयोगों में इसकी सीमान्त उपयोगिता समान रहे।"

   "If a person has a thing which he can put to several uses, he will distribute it anong these uses in such a way that it has the same marginal utility in all. For if, it had a greater marginal utility in one use than in another, he would gain by taking away some of it from the second use and applying it to the first."

2. **नियम के विविध नाम (Different Names of the Law)**- इस नियम को कई नामों से पुकारा जाता है। जैसे कि:
   1. **अधिकतम सन्तुष्टि का नियम (Law of Maximum Satisfaction)**- क्योंकि इस नियम की सहायता से उपभोक्ता अपनी आय से अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करता है।
   2. **प्रतिस्थापन का नियम (Law of Substitution)**– क्योंकि उपभोक्ता अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करने के लिए कम सीमान्त तुष्टिगुण वाली वस्तु के स्थान पर अधिकतम सीमान्त तुष्टिगुण वाली वस्तु प्रतिस्थापित करता है और तब तक करता जाता है जब तक कि उनकी सीमान्त उपयोगिता बराबर नहीं हो जाती।
   3. **सम-सीमान्त तुष्टिगुण का नियम (Law of Equi-Marginal Utility)**– उपभोक्ता अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करने के लिए वस्तुओं को तब तक प्रतिस्थापित करता है जब तक कि हर वस्तु से मिलने वाला सीमान्त तुष्टिगुण बराबर-बराबर नहीं हो जाता।
   4. **आनुपातिकता का नियम (Law of Proportionality)**– आधुनिक अर्थशास्त्री इस नियम को आनुपातिकता के नियम के नाम से भी पुकारते हैं। उनके अनुसार एक व्यक्ति अधिकतम सन्तुष्टि उस समय प्राप्त करता है जब भिन्न-भिन्न वस्तुओं से प्राप्त सीमान्त तुष्टिगुण उसकी कीमत के अनुपात के बराबर हो जाए। इसे निम्नलिखित अनुपातों द्वारा भी प्रकट किया जा सकता है:

$$\frac{A \text{ वस्तु का सीमान्त तुष्टिगुण}}{\text{A वस्तु की मांग}} = \frac{\text{B वस्तु का सीमान्त तुष्टिगुण}}{\text{B वस्तु की मांग}} = \text{आदि}$$

$$\frac{MU \text{ of } A}{Price \text{ of } A} = \frac{MU \text{ of } B}{Price \text{ of } B} = \text{and so on}$$

   5. तटस्थता या उदासीनता का सिद्धान्त, उपभोक्ता का सिद्धान्त, मितव्ययिता का सिद्धान्त, मौसेन का द्वितीय सिद्धान्त आदि।

सम सीमान्त उपयोगिता नियम की उदाहरण तथा रेखाचित्र द्वारा व्याख्या:

उदाहरण (Example द्वारा)- माना कि एक उपभोक्ता के पास व्यय करने के लिए 7 रूपये हैं जिन्हें वह दो वस्तुओं पर व्यय करना चाहता है यह हमने मान लिया कि प्रत्येक वस्तु की एक ईकाई का मूल्य एक रूपया है। उपभोक्ता को दोनों वस्तुओं

की विभन्न ईकाइयों से जो सीमान्त उपयोगिता प्राप्त होती है उसे तालिका 1.11 में दिखाया गया है:

तालिका 1.11

वस्तु की इकाइयाँ	'A' वस्तु (सीमान्त उपयोगिता)	'B' वस्तु (सीमान्त उपयोगिता)
1	32 (1)	28 (2)
2	28 (3)	24 (4)
3	24 (5)	20 (6)
4	20 (7)	16
5	16	12
6	12	8

3. रेखाचित्र द्वारा व्याख्या (Explanation by Diagram)

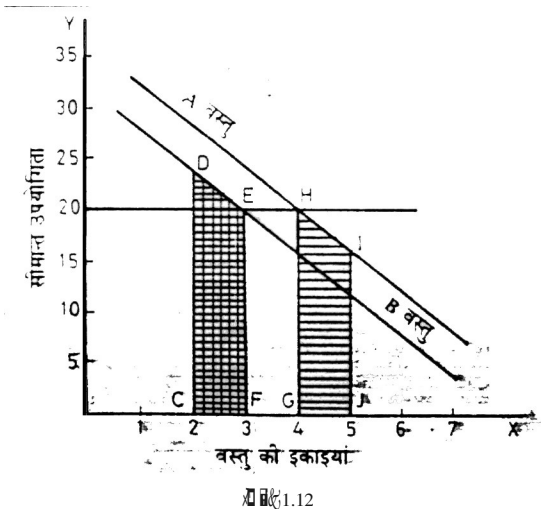

चित्र 1.12

तालिका 1.11 मे उपभोक्ता को 'A' वस्तु तथा 'B' वस्तु से प्राप्त होने वाली सीमान्त उपयोगिताओं को दिखाया गया है। यह तालिका सीमान्त उपयोगिता ह्रास नियम के अनुसार हर अगली इकाई से घटती सीमान्त उपयोगिता को प्रदर्शित करती हुयी है। अब उपभोक्ता को अपने 7 रूपये इन दो वस्तुओं पर इस प्रकार व्यय कटने है कि उसे अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त हो। यह तभी होगा जब वह 'A' वस्तु पर 4 रूपये तथा 'B' वस्तु पर 3 रूपये व्यय करे। उसकी कुल उपयोगिता (32 + 28 + 24 +20) + (28+24+20) –176 ईकाईयों के बराबर होगी।

वह इस सारणी के अनुसार अन्य किसी प्रकार अपनी मुद्रा को व्यय करके इससे अधिक उपयोगिता प्राप्त नहीं कर सकता है।

इसी तथ्य को हम रेखा चित्र 1.12 से भी स्पष्ट कर सकते हैं। रेखाचित्र 1.12 में दो रेखाएँ खींची गई हैं जो 'A' तथा 'B' वस्तुओं पर मुद्रा व्यय करने से प्राप्त होने वाली सीमान्त उपयोगिताओं को बतलाती हैं। 'A' वस्तु पर 4 रूपए व्यय करने पर GH के बराबर सीमान्त उपयोगिता प्राप्त होती है तथा 'B' वस्तु पर 3 रूपये व्यय करने पर FE के बराबर सीमान्त उपयोगिता प्राप्त होती है। GH तथा FE सीमान्त उपयोगिताएँ एक दूसरे के बराबर हैं तथा दोनों ही सीमान्त उपयोगिताएँ 20 के बराबर हैं। दोनों दशाओं में बराबर सीमान्त उपयोगिताएँ प्राप्त होने से ही उपभोक्ता को अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त होती है। यदि हम मानले कि उपभोक्ता इस क्रम को बदल कर किसी अन्य प्रकार से मुद्रा व्यय करता है अर्थात् वह 'B' वस्तु से एक रूपया निकालकरक 'A' वस्तु पर अधिक व्यय करता है तो उपभोक्ता को CDEF क्षेत्र को क्षेत्र के बराबर होगी तथा GHIJ के बराबर अतिरिक्त लाभ मिलेगा। CDEF का क्षेत्रफल GHIJ से अधिक है अतः उपभोक्ता की कुल उपयोगिता कम हो जायेगी।

4. नियम की मान्यताएँ (Assumptions of the Law)

यह नियम निम्नलिखित मान्यताओं के लागू होने पर क्रियाशील होता है:

1. उपभोक्ता विवेकशील प्राणी होता है तथा अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त करना चाहता है।
2. उपभोक्ता की आय सीमित होती है जिसे वह अपनी आवश्यकताओं की वस्तुओं तथा सेवाओं पर व्यय करता है।

3. वस्तुएँ छोटी तथा विभाज्य होती हैं।
4. वस्तुओं से प्राप्त उपयोगिता को मापा जा सकता है तथा ऐसे संख्या में व्यक्त किया जा सकता है।
5. द्रव्य की सीमान्त उपयोगिता समान रहती है।
6. उपभोक्ता की आय तथा व्यय की अवधि एक ही होती है।

5. सम-सीमान्त उपयोगिता नियम अथवा आनुपातिकता के नियम का क्षेत्र अथवा महत्त्व
(Scope or Importance of Law of Equi-Marginal Utility or Law of Proportionality)

सम-सीमान्त उपयोगिता नियम अथवा प्रतिस्थापन के नियम का आर्थिक विश्लेषण में अत्यधिक महत्त्व है इसलिए प्रो. मार्शल ने कहा है, "प्रतिस्थापन का सिद्धान्त आर्थिक अन्वेषण के प्रत्येक क्षेत्र में लागू होता है"।

"The theory of the principle of substitution extend over almost every field of economics enquiry".

e.g. उपभोग के क्षेत्र में, उत्पादन के क्षेत्र में, विनिमय के क्षेत्र में, वितरण के क्षेत्र में तथा सार्वजनिक वितरण के क्षेत्र में इसका प्रयोग किया जाता है।

अवसर लागत का सिद्धान्त
(Principal of Opportunity Cost)

आधुनिक अर्थशास्त्री अवसर लागत की धारण को बहुत महत्त्व देते हैं। इस धारणा का प्रतिपादन सबसे पहले डी.आई.ग्रीन ने अपने लेख 'Pain Cost and Opportunity Cost' में 1894 में किया था। परन्तु इस धारणा को प्रसिद्ध करने का श्रेय प्रो. नाइट (Prof. Knight) को जाता है। यह धारणा इस मान्यता पर आधारित है कि अर्थव्यवस्था में उत्पादन के साधन सीमित होते हैं और जितनी वस्तुएँ हम चाहते हैं उन सबका निर्माण नहीं किया जा सकता। अतः हमें चुनाव करना पड़ता है। यदि किसी एक वस्तु का उत्पादन किया जाता है तो किसी दूसरी वस्तु का त्याग करना पड़ेगा। उदाहरण के लिए महिला को यदि लिपिस्टिक और पैन के बीच चुनाव करना है और इस चुनाव में यदि पैन खरीदने का निर्णय लेती है तो उसे लिपिस्टिक के बिना रहना पड़ेगा। अतः उसके लिए पैन की लागत वह लिपिस्टिक है जो पैन खरीदने के लिए त्यागनी पड़ी है।

1. अवसर लागत का अर्थ
(Meaning of Opportunity Cost)

किसी भी वस्तु की अवसर लागत एक सर्वश्रेष्ठ विकल्प का बलिदान है। (Opportunity cost is the cost of the next best alternative foregone) अर्थात् एक वस्तु को पैदा करने के लिए दूसरी जिस वस्तु का त्याग करना पड़ता है वह पैदा की गई वस्तु की अवसर लागत कहलाती है। "'X' वस्तु की एक ईकाई पैदा करने की अवसर लागत 'Y' वस्तु की यह मात्रा होगी जिसका त्याग करना पड़ेगा।" मान लो एक विशेष प्रकार के श्रमिकों का प्रयोग टी.वी. और फ्रिज बनाने में कर सकते हैं। यदि उनका प्रयोग टी.वी. बनाने में किया जाए तो फ्रिजों के उत्पादन का त्याग करना पड़ेगा अतः टी.वी. की अवसर लागत त्यागे गए फ्रिज होंगे। अवसर लागत को वैकल्पिक लागत (Alternative Cost), हस्तांतरण आय (Transfer Earning) आदि भी कहा जाता है।

2. अवसर लागत की परिभाषा
(Defination of Opportunity Cost)

1. फर्गुसन के अनुसार, "X– वस्तु की एक इकाई उत्पन्न करने की अवसर लागत Y वस्तु की वह मात्रा है जिसका कि त्याग करना पड़ता है।

   (The Opportunity cost of producing one unit of X– commodity is the amount of Y– commodity that must be sacrificed)

2. प्रो. लिप्सी के अनुसार, "किसी साधन के प्रयोग करने की अवसर लागत दूसरी वस्तु की वह मात्रा है जिसका कि स्पष्टतः त्याग करना पड़ता है।"

संक्षेप में किसी एक वस्तु की अवसर लागत किसी दूसरी वस्तु के सर्वश्रेष्ठ विकल्प का त्याग (Next best alternative forgone) होती है। उदाहरण के लिये मान लीजिए एक खेत में उतना ही व्यय करके 500 रू. का गेहूँ, 400 रू. का चावल तथा 300 रू. का आलू उत्पन्न किया जा सकता है तो उत्पादक गेहूँ का उत्पादन करेगा। इस खेत में गेहूँ के स्थान पर चावल अथवा आलू भी उत्पन्न किये जा सकते हैं। अतः गेहूँ के विकल्प चावल व आलू दोनों हैं। किन्तु गेहूँ का सर्वश्रेष्ठ विकल्प चावल है न कि आलू। अतः गेहूँ की अवसर लागत 400 रू. के चावल होंगे 300 रू. के आलू नहीं। इसलिए किसी वस्तु की अवसर लागत उसके सर्वश्रेष्ठ विकल्प के बराबर होती है।

अवसर लागत में सुनिश्चित (explicit) और अंतर्निहत (implicit) दोनो प्रकार की लागते शामिल होती हैं। सुनिश्चित लागतें वे सीधे खर्चे हैं जो एक फर्म को वस्तुएं एवं सेवाएं खरीदने के लिए किए जाते हैं। उसमें मजदूरी और वेतन, कच्चे माल, बिजली, ईधन, विज्ञापन, परिवहन और कर के खर्च शामिल हैं। अंतनिर्हित लागतें उद्यमी द्वारा अपने संसाधनों और सेवाओं का आरोपित (imputed) मूल्य हैं। दूसरे शब्दों में, स्वनियोजित (self-employed) और निजी स्वामित्व (self–owned) संसाधन अपने सबसे बढ़िया वैकल्पिक प्रयोग में जो कमा सकते थे, वे उनकी अंतर्निहित लागतें हैं। इस प्रकार अंतर्निहित मजदूरी, लगान और ब्याज का संबंध सबसे ऊँची मजदूरी, लगान और ब्याज से है जो एक उद्यमी अपने श्रम, बिल्डिंग और पूंजी का स्वयं प्रयोग न करके दूसरों को उधार देकर अथवा उनकी सेवा में लगाकर प्राप्त कर सकता था। परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि केवल अंतर्निहित लागतें ही अवसर लागत में शामिल होती हैं और सुनिश्चित लागतें इसमें शामिल नहीं होतीं। वास्तव में, किसी भी फर्म की अवसर लागम में सभी त्यागे गये विकल्प (alternative forgone) चाहे वे सुनिश्चित अथवा अंतर्निहित हों, शामिल होते हैं।

रेखा चित्र द्वारा व्याख्या (Explanation through Diagram)- अवसर लागत की धारणा को चित्र 1.13 में उत्पादन संभावना वक्र PP_1 द्वारा व्याख्या की गई है। इस वक्र के संयोग A पर फर्म OL_1 श्रम और OK_1 पूँजी का प्रयोग करती हैं। यदि वह L_1L_2 अधिक श्रम प्रयोग करना चाहती है तो उसे K_1K_2 पूँजी का त्याग करना पड़ेगा। इस प्रकार L_1L_2 श्रम की अवसर लागत K_2K_2 पूंजी की मात्रा है।

3. इसका महत्त्व (Its Importance)

अवसर लागत की धारणा का आर्थिक समस्याओं में बहुत व्यवहार होता है। साधन-कीमतों के निर्धारण में यह लागू होती हैं। उपभोग और सार्वजनिक व्यय में भी इसका व्यवहार किया जा सकता है। सिनेमा देखने की लागत वह पैन है जिसे खरीदने से विद्यार्थी को वंचित रहना पड़ता है। समाज के लिए, हथियारों की फैक्टरी की लागत नागरिकों के वे लाभ हैं जिनका त्याग करना पड़ता है। अन्तिम, अवसर लागत कीमत के तथ्य की व्याख्या करती है क्योंकि वस्तुएँ और साधन सेवाएँ दुर्लभ हैं, उनका वैकल्पिक प्रयोग किया जाता है और इसलिए उनकी कीमत होती है। यदि उनकी प्रचुरता हो तो ऐसे विकल्प नहीं होंगे जिनका त्याग किया जाए, इसलिए ना ही अवसर लागत और ना ही कीमत होगी।

4. व द्धिमान लागतें तथा डूबी या धंसी लागतें (Incremental Costs & Sunk Costs)

व द्धिमान लागतें (Incremental Costs)– जब एक फर्म अपनी व्यावसायिक क्रियाओं के स्तर अथवा प्रकृति में परिवर्तन करती हैं तब उससे जो अतिरिक्त लागतें आती हैं उन्हें व द्धिमान लागतें कहते हैं। उदाहरण के लिए एक फर्म के उत्पादन कार्यक्रम में किसी नई वस्तु को शामिल करे, पुरानी मशीन के स्थान पर नई मशीन खरीदें, अथवा प्रचलित वितरण के माध्यम को बदले, तब वर्तमान लागत से जितनी अधिक लागत आयेगी उसे व द्धिमान लागत कहेंगे। नई फर्म की स्थापना के समय व द्धिमान लागतों का प्रश्न नहीं उठता है। इन लागतों का प्रश्न तो तभी उत्पन्न होता है जब किसी पूर्वस्थिति व्यवसाय की क्रियाओं में परिवर्तन सोचा जा रहा हो।

धँसी लागतें (Sunk Costs)– वे लागतें होती हैं जिन पर व्यावसायिक क्रिया की प्रकृति अथवा स्तर में परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। व्यावसायिक क्रियाओं का कोई भी स्तर क्यों न हो, धँसी लागत ज्यों की त्यों बनी रहती है। धँसी लागत का सबसे अच्छा उदाहरण ह्रास है।

प्रबन्धकीय निर्णयों में व द्विमान लागतों तथा धँसी लागतों में भेद करना उस समय अति महत्त्वपूर्ण होता है जब विभिन्न विकल्पों का मूल्यांकन करना हो। विभिन्न विकल्पों में व द्विमान लागतें भिन्न-भिन्न होती हैं जबकि धँसी लागतें प्रायः पूर्ववत् बनी रहती हैं चाहे किसी भी विकल्प को चुना जाय।

Assignment – 1

A) अति लघुतरात्मक प्रश्नः (दो अंकों वाले प्रश्न)

1. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र से आप क्या समझते हैं।
2. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र को परिभाषित कीजिए।
3. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र की सीमाएं बताइए।
4. फर्म का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
5. लाभ अधिकतमकरण का सिद्धान्त किन मान्यताओं पर आधारित है। किन्हीं तीन मान्यताओं का वर्णन कीजिए।
6. बोमल का विक्रय अधिकतमकरण किन मान्यताओं पर आधारित है।
7. Mc Nair & Meriam की परिभाषा व्यक्त कीजिए।

B) लघुतरात्मक प्रश्न (पांच अंक वाले प्रश्न)

1. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र के क्षेत्र से आप क्या समझते हैं।
2. प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र का वर्णन कीजिए।
3. आर्थिक विश्लेषण की आर्थिक सामग्री क्या है।

C) निबंधात्मक प्रश्न (15 अंक वाले प्रश्न)

1. प्रबंधकीय अर्थशास्त्र का अर्थ तथा विषय सामग्री बताइए।
2. फर्म का अर्थ तथ्य दोनों की विशेषताए बताइए।
3. निम्न पर टिप्पणी कीजिए।
   a) लाभ अधिकतमकरण सिद्धान्त।
   b) विलियमसन का प्रबन्धकीय विवेक सिद्धान्त।